अंग्रेजों को चुनौती देकर परंपराओं को जीवित रखने वाली गरसिया जनजाति

गरासिया जनजाति की शादियों में कई बार बच्चों के साथ-साथ उनके माता-पिता और दादा-दादी तक फेरे लेते देखे जा सकते हैं

यूं तो उनकी ज़िंदगी में कोविड-19 की वजह से कोई बड़ा विपरीत प्रभाव नहीं पड़ा है. संयोग से उनका पारिवारिक पेशा है ही कुछ ऐसा. गुजर-बसर के लिए भी वे किसी पर आश्रित नहीं हैं, बल्कि आत्मनिर्भर हैं. उनके घर का कोई सदस्य कमाई-धंधे के लिए किसी दूसरे शहर भी नहीं गया हुआ था जो बेरोज़गार होकर लौट आया हो. लेकिन फ़िर भी वे कुछ मायूस हैं. कहती हैं कि इस साल शादी करना चाहती थीं. अपने बच्चों के पिता से. उस आदमी से, जिसके साथ वे बीते बीस साल से रह रही हैं. अपने उस प्रेमी से जिसका हाथ थामकर वे उन्नीस बरस की उम्र में ही अपना घर-बार छोड़ आई थीं. लेकिन कोरोना वायरस की वजह से उनका यह अरमान इस बार पूरा नहीं हो सका. अपनी मायूसी को मुस्कान में पिरोते हुए वे कहती हैं कि 'इस बार हो जाती तो अच्छा था. अब आगे कभी देखेंगे !'

अगर रिपोर्ट का शीर्षक इशारा न दे तो ये किसी महानगर में रहने वाली बेहद आधुनिक विचारों वाली महिला की कहानी लगती है. लेकिन यह हक़ीकत है 39 वर्षीय लक्ष्मी देवी गरासिया की. वे राजस्थान के सिरोही ज़िले के आबू रोड ब्लॉक में पड़ने वाले घणका गांव में रहती हैं. उनके साथ रहते हैं उन्हीं के हमउम्र गोविंद गरासिया. देसी अंदाज में कहें तो लक्ष्मी देवी और गोविंद गरासिया ने बीस दिवाली के दीए साथ में जलाए हैं, बीस बार फाग में गुलाल साथ उड़ाया है. धूप-छांव, सुख-दुख सब इतने साल साथ-साथ झेला है. लेकिन वे दोनों पति-पत्नी नहीं हैं. कभी अग्नि को साक्षी मानकर सात फेरे नहीं लिए. उनका यह रिश्ता आधुनिक लिव-इन और परंपरागत विवाह प्रथा से अलग किसी खूबसूरत मोड़ पर ठहरा नज़र आता है.

लेकिन ऐसा रिश्ता सिर्फ़ लक्ष्मी देवी या गोविंद गरासिया को ही हासिल नहीं है. बल्कि राजस्थान के सिरोही और उदयपुर जैसे दक्षिणी ज़िलों या उत्तरी गुजरात के पहाड़ी इलाकों में बसने वाली गरासिया जनजाति के अधिकतर घरों में ऐसी दास्तानें सुनने कोमिल जाएगी.

गोविंद गरासिया और लक्ष्मी देवी

गरासिया कौन हैं ?

अरावली की गोद में पलने-बढ़ने वाले गरासियों की उत्पत्ति का कोई सटीक विवरण नहीं मिलता है. ये समुदाय उदयपुर के गोगुंदा को अपनी उत्पत्ति का स्थान मानते हैं. दंत कथाओं के अनुसार गरासिया शब्द की उत्पत्ति संस्कृत के गृह+ऋषि शब्द से हुई जो अपभ्रंश होकर ग्रासिया, गरासिया या गराइया बन गया. कहा जाता है कि सदियों पहले जब ऋषि-मुनि पर्वतों और वनों में तपस्या करते थे तो उनकी रक्षा और सेवा के लिए क्षत्रिय समुदाय के कुछ लोगों ने भी जंगल में ही अपने घर यानी गृह बना लिए और वे गृहऋषि कहलाए. राजस्थान के विभिन्न रजवाड़ों के लिए ईस्ट-इंडिया कंपनी के प्रतिनिधि रहे कर्नल जेम्स टॉड (1829) के मतानुसार गरासिया शब्द 'गवास' से बना जिसका एक अर्थ सेवक भी माना जाता है.

वहीं, सिरोही ज़िले के पिंडवाड़ा ब्लॉक में कार्यरत सरकारी अध्यापक धरमाराम गरासिया इस बारे में हमें बताते हैं कि बादशाह अकबर ने जब 'दीन-ए-इलाही' मजहब शुरु किया तो उन्होंने समाज में कुछ धार्मिक बदलावों के निर्देश दिए. लेकिन दूर-दराज में मौज़ूद उनके सिपहसालारों ने इन निर्देशों को अपने ढंग से तोड़-मरोड़ कर इनका दुरुपयोग करना शुरु कर दिया. नतीजतन राजस्थान के कुछ राजपूत परिवार अपने धर्म और मान की रक्षा के लिए पहाड़ों में जा बसे. धीरे-धीरे वे अपने मुख्य राजपूत समाज से कटते गए और एक अन्य जनजाति 'भील' के संपर्क में आते गए. बाद में गिर यानी पर्वत पर बसने की वजह से उन राजपूतों के वंशजों का नाम गरासिया पड़ गया.' धरमाराम गरासिया अपने समुदाय को चित्तौड़ में गुहिल राजवंश के संस्थापक बप्पा रावल (राणा प्रताप के पूर्वज) की संतानें मानते हैं. अपनी वंशावलियों का हवाला देते हुए वे कहते हैं कि 'हमारे कई गोत्र राजपूतों से आज भी मिलते हैं.'

वहीं कुछ अन्य जानकार राजपूतों के गरासिया बनने की बात से तो इत्तेफाक रखते हैं, लेकिन वे यह भी कहते हैं कि ऐसा बहुत बाद में हुआ जबकि मूल गरासिया जनजाति का अस्तित्व इन घटनाओं से बहुत पहले से है. इसलिए जो राजपूत परिवार बाद में गरासिया समुदाय से जुड़े उन्हें आज भी 'राजपूत-

गरासिया' कहा जाता है.

गरासिया जीवनसाथी कैसे चुनते हैं

इस बारे में सत्याग्रह ने गरासिया समुदाय के कई लोगों से बात की तो उन्होंने हमें तकरीबन एक सी ही जानकारी दी. सरकारी शिक्षिका चंपा गरासिया भी इन्हीं में से एक हैं. वे सिरोही के ही आबू रोड ब्लॉक के गोलियाफली गांव में पढ़ाती हैं. वे कहती हैं कि 'आम तौर पर गरासिया जाति में कम उम्र में ही शादी हो जाती है. इनमें से एक तरीका सामान्य अरेंज मैरिज जैसा ही है जिसमें लड़के और लड़की के माता-पिता मिलकर उनका रिश्ता पक्का करते हैं. लेकिन हमारे समाज में दूसरा और ज़्यादा प्रचलित तरीका प्रेम-विवाह का है.' हालांकि चंपा ने अपने बाकी सभी भाई-बहिनों से उलट अपने माता-पिता की पसंद से ही शादी की है.

चंपा गरासिया बताती हैं कि 'अगर किसी दूसरे समाज में लड़के-लड़की के प्रेम के बारे में किसी को पता चल जाए तो कानाफूसी होने लगती है. लेकिन हमारे यहां उस जोड़े पर गीत बना दिए जाते हैं जिन्हें गाकर इशारों ही इशारों में प्रेमी-प्रेमिका को चिढ़ाया जाता है. ऐसे में कभी-कभी बात बिगड़ने की भी स्थिति पैदा हो जाती है. ऐसा कई बार दोनों परिवारों की आपसी असहमति की वजह से भी हो जाता है. इसलिए प्रेमी-प्रेमिकाएं अक्सर इस बात को छिपा कर रखते हैं और मिलन के लिए सबसे सही मौके का इंतजार करते हैं. और ये मौका आता है मेलों की शक्ल में.'

'मार्च-अप्रैल में (रबी की) फसलें कटने के बाद गरासियों के छोटे-बड़े मेले शुरु हो जाते हैं. लेकिन इनमें सबसे प्रमुख मेला हर साल गणगौर के त्यौहार पर आबू रोड के ही पास सियावा गांव में लगता है. उस दिन युवक और युवतियां उसी तरह से सज-धज कर मेले पहुंचते हैं, जैसे शादी के लिए जा रहे हों. और वहीं से प्रेमिका अपने प्रेमी के साथ उसके घर चली जाती है. इसमें मजे की बात यह भी है कि कई जोड़ियां तो मेलों में ही आकर बनती हैं. लड़का-लड़की वहीं एक दूसरे को पसंद कर लेते हैं. यदि उनमें सहमति बन जाए तो वे एक दूसरे को अपना जीवनसाथी चुन लेते हैं' चंपा गरासिया बड़े चाव के साथ हमें बताती हैं.

शिक्षिका चंपा गरासिया

उनकी ये बात ध्यान खींचती है. क्योंकि इसका मतलब है कि गरासिया समाज के उम्रदराज़ लोग इस संभावना से पूरी तरह वाक़िफ़ होते हैं कि मेले के दिन उनके बच्चे अपनी पसंद से अपना जीवनसाथी चुन सकते हैं. लेकिन मुख्यधारा के समाज के बड़े हिस्से की तरह वे उन पर कोई पाबंदियां नहीं थोपते. शिक्षक धरमाराम इस बारे में कहते हैं कि 'न जाने क्यों इस परंपरा को अलग तरह से देखा जाने लगा है. जबकि अर्जुन ने सुभद्रा का और श्री कृष्ण ने रुक्मणी का वरण ऐसे ही किया था. प्रेम तो सदियों से हमारी संस्कृति का अभिन्न हिस्सा रहा है.'

भगवान शिव और उन्हें अपने नेह की डोर से बांधने वाली देवी पार्वती को विशेष तौर पर पूजने वाले गरासियों के लोकगीत भी इस बात की गवाही देते हैं कि ये समुदाय न जाने कब से प्रीत की रीत को बदस्तूर निभाते चला आ रहा है. गरासिया संस्कृति पर उपलब्ध बहुत कम साहित्य में से एक 'भाकर रा भौमिया' (पहाड़ के देवता) किताब में साहित्यकार अर्जुन सिंह शेखावत ऐसे ही एक गीत का ज़िक्र करते हैं जो इस समुदाय में प्रेम की स्वच्छंद स्वीकारोक्ति को दिखाता है :

ऐ मारै गोठियौ कीदो हेतु रे, धारा-धारा हियौं रोवैं
मारे छाळ्यां मा जाणु हेतु रे, धारा-धारा हियौं रोवैं
मारे सेंदा वाळी थामली रे, धारा-धारा हियौं रोवैं
मारे दोस्ती लागी हेती रे, धारा-धारा हियौं रोवैं
ऐ मारे गोठीयो कीदो हेतु रे, धारा-धारा हियौं रोवैं

(सखि, मैंने उससे प्रेम क्यों किया. प्रीत कर के मुझसे भारी भूल हो गई. उसे याद कर के मेरे हृदय से आंसुओं की धारा बहने लगती है. मुझे बकरियां चराने जाना था. पर मैं सब भूल गई. उसे याद कर के मेरे

हृदय से आंसुओं की धारा बहने लगती है. मुझे उसकी ऐसी दोस्ती लगी है कि उसे याद कर के मेरे हृदय से आंसुओं की धारा बहने लगती है. मैंने उससे प्रेम ही क्यों किया. उसे याद कर के मेरे हृदय से आंसुओं की धारा बहने लगती है.)

यहां एक और अहम बात यह है कि गरासिया जनजाति के लोग न सिर्फ़ अपनी नई पीढ़ी को प्रेम करने और अपना जीवनसाथी चुनने का अधिकार देते हैं, बल्कि जिस परिपक्वता के साथ वे अपने बच्चों के इस फ़ैसले के भागीदार बनते है, कथित आधुनिक भारतीय समाज के लिए हाल-फिलहाल उसकी कल्पना भी मुश्किल ही नज़र आती है.

दरअसल जब प्रेमिका अपने प्रेमी के घर पहुंच जाती है तो उस घर के बड़े बुजुर्ग मिलकर लड़की के परिवार को इस बात की जानकारी देते हैं और उन्हें उनकी बेटी की सुरक्षा को लेकर आश्वस्त करते हैं. इसके बाद लड़की के परिजन और कुटुंबी अपनी सुविधानुसार (अमूमन दो-चार दिन में) लड़के के घर पहुंचते हैं. वहां जाकर वे अपनी बेटी से यह सुनिश्चित करते हैं कि वह अपने नए घर में खुश है या नहीं, कहीं उससे जीवनसाथी चुनने में कोई भूल तो नहीं हो गई या उसे वहां किसी जोर-जबरदस्ती से तो नहीं लाया गया है, वगैरह-वगैरह. यदि वे अपनी बेटी को संतुष्ट पाते हैं तो आगे की सामाजिक रस्में निभाई जाती हैं जो कि और दिलचस्प होती हैं. ये रस्में इसलिए भी खास होती हैं क्योंकि इनमें से अधिकतर पुरुष की बजाय स्त्री केंद्रित ज्यादा होती हैं.

अन्य जातियों की तरह गरासियों में भी दहेज प्रथा का चलन है. लेकिन इस समुदाय में लड़के की बजाय लड़की वाले दहेज की मांग करते हैं. इसे 'दापा' कहा जाता है. दापा की रकम लड़की का कुटुंब और समाज के पंच मिलकर दोनों परिवारों की स्थिति के मुताबिक तय करते हैं. दापा के एक हिस्से पर पंचों का हक़ होता है. फ़िर कुछ राशि को लड़की का पिता अपने भाई-बंधुओं में बांटता है. और बचे पैसे को ज़रूरत पड़ने पर या तो खुद रख लेता है या फ़िर अलग-अलग तरीकों से बेटी को ही वापिस लौटा देता है.

गरासियों में दापा के लेन-देन के समय भी कई दिलचस्प घटनाएं देखने को मिल जाती हैं. ऐसा ही एक घटना के बारे में चंपा गरासिया कहती हैं कि 'शिक्षिका होने की वजह से मेरे कुटुंबियों ने मेरे ससुराल वालों पर ज़्यादा दापा देने के लिए दवाब बनाने की कोशिश की थी. लेकिन मैं खुलकर इसके विरोध में आ गई. आख़िरकार मेरे रिश्तेदारों को वही भेंट स्वीकार करनी पड़ी जो मेरे ससुराल पक्ष ने अपनी खुशी से उन्हें दी थी.' आप एक ऐसी बहू को उसके ससुराल में मिलने वाले सम्मान का अंदाजा लगा सकते हैं जो उनके लिए अपने मायके वालों से भी भिड़ गई थी.

गरासिया समुदाय की युवतियां और बच्चे

यह जानना शायद आपको सबसे ज़्यादा दिलचस्प लगे कि दापा के लेन-देन के बाद भी लड़के-लड़की का शादी करना ज़रूरी नहीं होता है. जैसा कि हमने रिपोर्ट की शुरुआत में ही ज़िक्र किया था कि गरासियों में ऐसे कई परिवार हैं जिनमें कई-कई साल साथ गुज़ारने के बाद भी जोड़ी ने अग्नि के सात फेरे नहीं लिए होते हैं. इसके दो बड़े कारण माने जाते हैं.

पहला तो यह कि ब्रिटिश राज में रियासतों ने आम जनता पर कई तरह के कर लगा दिए थे. इनमें से एक चंवरी कर भी था जो आगे चलकर राजस्थान में किसान आंदोलनों की भी बड़ी वजह बना. इस कर के तहत चंवरी यानी मंडप में बेटी के फेरे पड़ने से पहले उसके पिता को राजकोष में एक निश्चित राशि जमा करवानी होती थी. कहा जाता है कि गरासिया समुदाय ने यह कर न देने की ठान ली और अपनी बेटियों को बिना फेरों के ही विदा करना शुरु कर दिया. उस जमाने में यह एक बड़ा सामाजिक बदलाव था और एक तरह का सत्याग्रह भी जो आगे चलकर परंपरा में तब्दील हो गया.

आजादी के बाद चंवरी कर तो ख़त्म हो गया. लेकिन नई मुसीबत यह थी कि फेरे लेना और औपचारिक तौर पर शादी करने से जुड़ा आयोजन एक बड़े खर्चे का कारण बनने लगा. नतीजतन गरासियों ने बिना फेरों के ही साथ रहना ज्यादा मुनासिब समझा. और ज़रूरत पड़ने पर कुटुंब-परिवार में किसी नवयुवक या नवयुवती की शादी होने पर घर के कई बुजुर्ग जोड़े भी उसके साथ ही फेरे लेने लगे. ये मौके भी बड़े ही रोचक साबित होते हैं जब बेटे/बेटी के साथ उनके माता-पिता या चाचा-चाची या कुटुंब की अन्य उम्रदराज़ जोड़ियां हल्दी लगवाने से लेकर फेरों तक हर रस्म साथ ही निभाती हैं. ऐसी कई शादियों में बच्चों के साथ उनके माता-पिता ही नहीं बल्कि दादा-दादी तक भी फेरे लेते हैं. ऐसा विशेष तौर पर लड़कियों की शादी में होता है. क्योंकि गरासियों की मान्यता के अनुसार कोई विवाहित महिला ही नए दामाद को तिलक लगाकर उसका स्वागत कर सकती है. लेकिन इस समुदाय में शादीशुदा महिला का मिलना ही एक चुनौती है. फ़िर बेटियों की मांएं भी स्वभाविक तौर पर अपने दामाद का स्वागत खुद ही करना ज्यादा पसंद करती हैं. इसलिए वे अपनी बेटी की शादी से ठीक पहले खुद शादी कर लेती हैं.

गरासियों की इन परंपराओं के बारे में बात करते हुए दैनिक भास्कर (उदयपुर संभाग) के संपादक त्रिभुवन कहते हैं, 'हमारा मुख्यधारा का समाज भले ही आधुनिकता का आवरण ओढ़े हुए रहता है. लेकिन देखा जाए तो आधुनिकता का असल बोध इन आदिवासियों में है. और ऐसा सिर्फ़ गरासियों के लिए ही नहीं बल्कि सभी जनजातियों के मामले में कहा जा सकता है.' सत्याग्रह से हुई बातचीत में वे आगे जोड़ते हैं, 'तथाकथित ऊंचे वर्गों के लोग अपने झूठे सम्मान के नाम पर प्रेम करने वाले अपने बच्चों का क़त्ल कर देते हैं. या फ़िर उन वर्गों के नौजवानों को आत्महत्या करनी पड़ती है. लेकिन जनजातियां इस मामले में परिपक्व हैं. वे न तो दो लोगों के मिलन को रोकते या प्रभावित करते हैं और न ही उनके बिछड़ने को. जनजातियों के दिलो-दिमाग बंद नहीं हैं. बल्कि खुले हुए हैं. उनकी परंपराएं बहुत उन्नत हैं. हमें उनसे बहुत कुछ सीखने की ज़रूरत है. क्योंकि असल में वे हमसे कहीं ज्यादा सभ्य भी हैं.'

गरासियों में अलग होने पर भी कोई पाबंदी नहीं

गरासियों में यदि कोई पति-पत्नी या प्रेमी जोड़ा अलग होना चाहे तो उसके लिए भी समाज रास्ते बंद नहीं करता. जैसे, मेले से अपने प्रेमी के घर गई लड़की समझे कि जीवनसाथी चुनने में उससे कोई ग़लती हो गई है तो वह अपने पिता, भाइयों के साथ वापिस अपने घर लौट सकती है. उसे रुकने के लिए कोई बाध्य नहीं करता है. और यदि उस लड़की को मेले से कोई लड़का किसी जोर-जबरदस्ती या दवाब के ज़रिए अपने साथ ले जाए तो लड़के के परिवार को पंचों द्वारा तय किया गया आर्थिक दंड भरना होता है जिसे 'कायदा' कहा जाता है. यह मुआवज़ा लड़की और उसके परिवार को दिया जाता है.

इसी तरह यदि कोई पुरुष कुछ वर्ष बाद अपनी पत्नी या प्रेमिका को छोड़ता है तो भी उसे लड़की के

परिवार वालों को मुआवज़ा देना पड़ता है. स्थानीय भाषा में इसे 'सेरा' कहा जाता है जिसकी मदद से वह औरत अपनी पसंद से एक नई शुरुआत कर सकती है. और यदि कोई महिला स्वेच्छा से अपने पति या प्रेमी को छोड़कर मायके जाना चाहे तो उससे दंड वसूलने का कोई प्रावधान नहीं है. क्योंकि गरासियों में आम धारणा है कि कोई भी औरत बिना वाजिब कारण के पीहर जाकर नहीं रहती है. लेकिन यदि कोई औरत मायके जाने की बजाय किसी अन्य पुरुष के साथ रहने के लिए अपना ससुराल छोड़े तो उस स्थिति में उसका नया साथी उसके पति को मुआवज़ा देता है. इस आर्थिक दंड को 'झगड़ा' कहा जाता है. ऐसी कोई भी स्थिति बनने पर बच्चे आम तौर पर पिता के ही पास रहते हैं.

यहां यह समझना ज़रूरी है कि मुख्यधारा के समाज की तरह गरासिया जनजाति में किसी भी रिश्ते को छिपाया नहीं जाता है और न ही कोई इसे लेकर किसी के दाब-धौंस में आता है. ख़ास तौर पर महिलाएं तो बिल्कुल नहीं. रिश्तों को लेकर सहज होने की वजह से गरासियों में दूसरे वर्गों की तरह न तो प्रेम करने पर हत्या या आत्महत्या की गुंजाइश बनती है और न ही किसी के अलग होने पर. इसके अलावा गरासियों में सामाजिक हिंसा तो देखने को मिल जाती है. लेकिन घरेलू हिंसा की गुंजाइश न के बराबर रहती है.

वरिष्ठ समाजशास्त्री राजीव गुप्ता इस बारे में कहते हैं कि 'गरासिया समुदाय अपेक्षाकृत सरल है, यही बात इसे लचीला बनाती है. वे अभी उस जटिल सभ्यता के संपर्क मे नहीं आए हैं जो कथित आधुनिक समाज ने विकसित की है.' गुप्ता के शब्दों में 'इस समाज में महिला श्रम की प्रधानता है. गरासियों के आर्थिक ढांचे में महिलाओं की साझेदारी या तो पुरुषों के बराबर है या फ़िर उनसे ज़्यादा है. ये साझेदारी महिलाओं को स्वायत्तता प्रदान करती है. यह भी एक बड़ा कारण है कि इस समाज में पुरुष सत्ता अभी उतनी हावी नहीं हो पाई है, जिसके अपने कई दोष हैं.'

गरासिया समुदाय मे महिलाओं का सामाजिक दर्ज़ा इससे समझा जा सकता है कि उन्हें अपने पितरों का तर्पण करने जैसे अधिकार प्राप्त हैं. इस सब के चलते गरासिए कन्या भ्रूण हत्या जैसे अपराध से मुक्त हैं. और अन्य जनजातियों की तरह इनका भी लिंगानुपात या तो बिलकुल संतुलित होता है या इस समुदाय में लड़कों की तुलना में लड़कियों की संख्या ज़्यादा होती है. लेकिन इस सब का यह मतलब बिल्कुल नहीं है कि गरासियों में कोई सामाजिक दोष होते ही नहीं हैं. बिल्कुल होते हैं. लेकिन उनकी चर्चा कभी और !

सभी फोटो – पुलकित भारद्वाज द्वारा

साभार- https://satyagrah.scroll.in/ से